Зб Р
427
Н

राष्ट्रीय अभिलेखागार पुस्तकालय
NATIONAL ARCHIVES LIBRARY
भारत सरकार
Government of India
नई दिल्ली
New Delhi

1559/1921

आह्वानांक Call No.
अवाप्ति सं० Acc. No. 427

"Ham Bhukhe Nange Kyon hain" Govt.

मज़दूर-किसान पुस्तक-माला—नं. १

हम भूखे नंगे क्यों हैं

321/31

प्रकाशक—मज़दूर-किसान पुस्तक-माला कार्यालय, ग्वालटोली, कानपुर

अप्रैल १९३५] [दो आना

IMPERIAL RECORD DEPARTMENT
RECEIVED.
18 JUL. 1935

NATIONAL ARCHIVES LIBRARY
No 427
Date 9.12.71
GOVT. OF INDIA

5/1811

हम भूखे-नंगे क्यों हैं?

मेहनत से ही जीवन है

आदमी जब परिश्रम करता है तभी सब चीज़ें तैयार होती हैं। परिश्रम करने से ही आदमी सुखी रह सकता है। परिश्रम के बिना आदमी ज़िन्दा भी नहीं रह सकता। परिश्रम न किया जाता तो यह मकान और महल कैसे खड़े होते? परिश्रम न किया जाता तो सब तरह के औज़ार, कल-पुर्ज़े, मशीनें, कारख़ाने, मोटर, बग्घी, कुरसी, टेबल, आदि कैसे बनते? परिश्रम न किया जाता तो बरतन कहाँ से आते, कपड़ा कहाँ से आता? खेतों पर परिश्रम न किया जाता तो खाने को अन्न भी कहाँ से आता? परिश्रम करना सारी मनुष्य-जाति छोड़ दे तो अनाज की उत्पत्ति, कपड़े व दूसरे सामान की उत्पत्ति, मकानों का बनना और दुरुस्ती, बंद हो जाय; सफ़ाई की जगह मैला हो जाय, जगह-जगह घास-फूस और पेड़ उग कर सारी पृथ्वी फिर जंगल बन जावे। अगर मनुष्य-जाति परिश्रम करना छोड़ दे तो उन लोगों की हालत कैसी हो जाय जो दूसरों के परिश्रम पर जीते हैं, जिनके बिस्तर करने को नौकर चाहिए, जिनके कपड़े पहनाने को नौकर चाहिये और जिनको रोटी बनाने को नौकर चाहिये? परिश्रम के बिना न रहने को घर हो सकते, न पहनने को कपड़े हो सकते, न खाने को रोटी मिल सकती। परिश्रम के बिना सारा मनुष्य-समाज ज़िन्दा नहीं रह सकता। कैसे अचरज की बात है कि आज-कल पूंजीपति लोग परिश्रम को ओछा काम और परिश्रमी को नीचा समझते हैं, तथा परिश्रम करनेवाले किसान-मज़दूर-कारीगर-सिपाही लोगों की हालत ही सब से ज्यादा ख़राब है! मेहनत करने वाले ग़रीब लोग ही भूखे-नंगे-बेघर हैं!

891.43
H88H

औज़ार (साधन) परिश्रम करनेवाले के ही अधिकार में होने चाहिए

दुनिया में परिश्रम मुख्य चीज़ है। परन्तु परिश्रम के साथ ही उसके साधन या औज़ार भी चाहिए। साधन या औज़ार भी परिश्रम से ही बनते हैं। रोटी बनाने के लिए चकला-बेलन, तवा-थाली चाहिए। खेती करने के लिए फावड़ा-हल आदि चाहिए। कपड़ा तैयार करने के लिए राँच-चर्खा आदि चाहिए। मकान बनाने के लिए कन्नी-हथौड़ा-बसूला आदि साधन या औज़ार चाहिए। यह साधन (ज़रिए) परिश्रम करनेवालों के साथ में, उनके ही क़ब्ज़े में, होने चाहिए। जो खेती करे उसी के क़ब्ज़े में हल, बैल, बीज, अनाज होना चाहिए। जो कपड़ा बुने उसी के कब्ज़े में सूत-चर्खा-राँच होना चाहिए। माल ढोनेवाले के क़ब्ज़े में गाड़ी होनी चाहिए। लकड़ी का काम करनेवाले के क़ब्ज़े में अपना बसूला, लोहे का करनेवाले के क़ब्ज़े में अपना हथौड़ा, चमड़े का काम करनेवाले के क़ब्ज़े में अपनी राँपी और हजामत बनानेवाले के क़ब्ज़ेमें अपना उस्तरा होना चाहिए। अगर परिश्रम करनेवाले के क़ब्ज़े में औज़ार न होंगे, औज़ार दूसरे की मिल्कियत या क़ब्ज़ेमें होंगे, और अगर उनके बनाने या प्राप्त करने का ज़रिया भी परिश्रम करनेवाले के पास न होगा, तो वह कुछ न कर सकेगा और भूखों मरेगा। उसे औज़ारवाले की अधीनता में रहना पड़ेगा। अगर परिश्रम करनेवाले के पास कुछ दिन बैठकर खाने, पहनने रहने का इन्तज़ाम भी न होगा तब तो उसे उस दूसरे की पूरी गुलामी में रहना पड़ेगा। कारीगर तभी स्वाधीन रह सकता है जब उसके साधन या औज़ार उसी के क़ब्ज़े में हों। आजकल मामूली घरु औज़ारों का भी ज़माना नहीं है, बल्कि हर धंधे की मशीनें बन गई हैं, जो मालदारों के क़ब्ज़े में हैं। यह सब मशीनें या कारख़ाने परिश्रम करनेवाले कारीगरों के सामूहिक, पंचायती या राष्ट्रीय अधिकार में होने चाहिए। तभी परिश्रम करनेवाले लोग स्वाधीनता और सुख से रह सकते हैं।

कुदरती चीजें पंचायती अधिकार में होनी चाहिए

साधन या औज़ारों के अलावा कई ऐसी चीजें भी हैं, जो कुदरत या परमात्मा की तरफ़ से मिली हैं, जैसे ज़मीन, जंगल, पत्थर, धातु, पानी, हवा, रोशनी। यह सब चीज़ें कुदरत या परमात्मा ने सब मनुष्यों, बल्कि सभी प्राणियों, के वास्ते बनाई हैं। इनके बिना आदमी का काम नहीं चल सकता। इनके बिना आदमी जी नहीं सकता। यह चीज़ें सब मनुष्यों के उपयोग के लिए कुदरत की तरफ़ से मिली हैं। पर अगर थोड़े से ही लोग इन पर कब्ज़ा कर लेंगे, तो बाक़ी सब मनुष्यों को इन पर क़ब्ज़ा करनेवाले लोगों की अधीनता या गुलामी में रहना पड़ेगा। परन्तु, कितना अन्याय है कि आजकल कुदरती सम्पत्ति, ज़मीन, मुल्क, जंगल, खान, नदी, समुद्र पर भी व्यक्तिगत स्वामित्व जमा कर कुछ लोग मालिक बन बैठे हैं!

रुपया-पैसा

रुपया-पैसा, सोना-चाँदी, या सिक्का आदमी के लिए बहुत ज़रूरी चीज़ें नहीं हैं। रुपए-पैसे और सिक्के के बिना मनुष्य-समाज मर नहीं सकता। इसके बिना भी आदमी का काम चल सकता है। एक ज़माना ऐसा भी था जब रुपए-पैसे का चलन नहीं था। जब सिर्फ़ अनाज या दूसरी चीज़ों का बदलाव हुआ करता था, और रुपया-पैसा नहीं चलता था, तब दुनिया आज से ज्यादा सुखी थी। जब से सिक्का चलने लगा पूंजीपति लोग सिक्कों को इकट्ठा करके मालदार बन गए। वे ब्याज, मुनाफ़ा, किराया, लगान वगैरः की शकल में गरीबों से सिक्का ले ले कर और भी दौलतमन्द हो गए। अब जिसने रुपया-पैसा इकट्ठा कर लिया है वह तो मालिक बन गया और जिसके पास रुपया-पैसा नहीं रहा वह पराधीन (ताबेदार या गुलाम) बन गया। आज-कल रुपए-पैसे की ही हुकूमत हो गई है। रुपए-पैसे के सबब से रुपए-पैसे वाले लोग मज़दूरों, किसानों को प्रायः बुरी तरह से रखते हैं, उनपर अत्याचार करते हैं, और खूब काम करने पर भी उनके पास अच्छी

तरह खाने पहनने तक को नहीं छोड़ते। बड़े-बड़े पैसेवाले, व्यापारी बैङ्क और कम्पनियाँ आपस में मिल जाते हैं और बड़ी भारी पूँजी इकट्ठी कर के काम करते हैं, जिससे कोई उनका मुक़ाबला न कर सके, और ग़रीबों को खूब चूसा और दबाया जा सके। यह पैसेवाले लोग करोड़ों अरबों रुपयों की चीजें कभी ख़रीदते और कभी बेचते रहते हैं और कभी कभी माल या पैसा रोक भी लेते हैं। इसीसे दुनिया में महँगाई और सस्ताई होती रहती है। सरकारों ने सिक्के बनाए और चलाये; और व्यापारियों व पूँजीपतियों ने इनके चलन को खूब बढ़ाया। सरकार और पूँजीपति ग़रीबों से अपना लेना, क़ानून पुलिस और अदालत के ज़ोर से, सिक्के की शकल में वसूल करते हैं। सिक्के में लगान चुकाने के लिए ही किसानों को लाचार हो कर अपना अनाज व दूसरी चीज़ें सस्ते दामों में बेचनी पड़ती हैं जिससे उन्हें बहुत तकलीफ़ होती है। सोना-चाँदी और सिक्के का आजकल का इन्द्रजाल सारी दुनिया को दुःख में डाले हुए है।

ग़रीब दुःखी क्यों हैं ?

आजकल के ज़माने में परिश्रमी ग़रीब लोगों, किसानों और मज़दूरों, के दुःख का कारण यह है कि तमाम कुदरती चीज़ें और परिश्रम के साधन (औज़ार, मशीनें, कारख़ाने) दूसरों के हाथों में हैं। यह कुदरत के क़ानून से उलटी बात है। इसी से सारी मनुष्य-जाति सभी देशों में दुःख उठा रही है। अलग-अलग लोगों ने या अलग-अलग कंपनियों ने साधनों और औज़ारों को, यानी हर तरह के कारख़ानों को अपने क़ब्ज़े में कर लिया है, और उनको अपनी पूँजी बना कर उनसे व्यक्तिगत फ़ायदा उठाते हैं; और चाहे जब, चाहे जितनी, चाहे जिस तरह की उत्पत्ति करते हैं, या बन्द कर देते हैं। इसी तरह कुछ अलग-अलग आदमियों ने गाँव-खेत, कुआ-तालाब, जंगल, खानें आदि अपने क़ब्ज़े में करली हैं, और उन्हें अपनी पूँजी बना कर उनसे व्यक्तिगत फ़ायदा उठाते हैं, और जिसको चाहे उनसे उपयोग लेने देते हैं, जिसको चाहे उपयोग नहीं लेने देते। यह तमाम चीज़ें सारी

मनुष्य-जाति के उपयोग की हैं। पर यह व्यक्तिगत मालिक बने हुए लोग उनको राष्ट्रीय या पञ्चायती अधिकार में न देकर, उनसे सारी जनता के हित का ख़याल न रख कर, पहले अपना फ़ायदा करते हैं। इसी व्यवस्था का नाम पूँजीवाद है। अपने स्वार्थ की रक्षा के लिए इन मालिक लोगों ने राज्य से क़ानून बनवा लिए हैं। यह पूँजीपति लोग कहते हैं कि गाँव की ज़मीन का अच्छा इन्तज़ाम करने के लिए हम ज़मींदार बने हैं, कारख़ाने में चीज़ों के बनाने का अच्छा इन्तज़ाम करने के लिए हम कारख़ानेदार बने हैं, सब लोगों को अच्छी-अच्छी चीजें पहुँचाने का इन्तज़ाम करने के लिए हम व्यापारी बने हैं, सबको आराम से रुपया दिलाने के लिए हम साहूकार बने हैं, किसी सड़क या इमारत या सप्लाई या डाक-जहाज़ या बिजली आदि का अच्छा इन्तज़ाम करने के लिए हम इनके ठेकेदार बने हैं, और लोगों को रहने के लिए मकानों का अच्छा इन्तज़ाम करने के वास्ते हम मकान-मालिक बने हैं। पर यह अच्छा इन्तज़ाम कुछ नहीं करते, बल्कि धन और शक्ति का भारी नुक़सान करते हैं, और स्वार्थ के सबब से सब चीज़ों के मालिक बन बैठे हैं। सब उत्पत्ति के ज़र्ये इन पूंजीपतियों के क़ब्ज़े में होने से सारी मनुष्य-जाति इन थोड़े से लोगों की गुलामी में मजबूरन फँस गई है। ये मालदार या मालिक लोग खूब शिक्षित और चालाक होते हैं और परिश्रम करनेवाली जनता अपढ़ और नासमझ रह गई है। ये पूंजीपति लोग अपने को शरीफ़ ख़ानदान का कहते हैं और परिश्रम करनेवालों को नीचे ख़ानदान का बताते हैं, और उन्हें नफ़रत की निगाह से देखते हैं।

आजकल दो ही जातियाँ हैं

क़ुदरती चीज़ों और सबके काम आनेवाले साधनों पर अपना क़ब्ज़ा कर बैठनेवाले ये लोग पटेल, ज़मींदार, ठाकुर, नवाब राजा या रईस, ठेकेदार, दूकानदार, साहूकार, बैंकर, मकानदार, कारख़ानेदार या दलाल, एजन्ट, वकील, या अफ़सर के नाम से मशहूर हैं। यह सब लोग गरीब मज़दूरों और किसानों की महनत से फ़ायदा उठा कर

मालामाल हो रहे हैं। आज जाति और मज़हब के भेद सब ग़रीब और अमीर के भेद में डूब गए हैं। आज दुनिया में दो ही सच्ची जातियाँ हैं-एक ग़रीब और एक अमीर। गरीब केवल श्रम करते हैं भोग नहीं। अमीर केवल भोग करते हैं श्रम नहीं।

पहले ज़माने में महनत करनेवाला पराधीन नहीं था

पहले ज़माने में कोली, बलाई या जुलाहा अपने ही घर पर, अपने ही सूत और राँच से, अपने ही स्त्री-पुत्र की सहायता से कपड़ा बुन लेता था। बारीक से बारीक और बढ़िया से बढ़िया कारीगरी वह अपने घर पर करता था और अपनी चीज़ों को खुद ही बेच कर आराम से ज़िन्दगी बसर करता था।

पहले ज़माने में लुहार अपने ही औज़ारों से अपने ही लोहे को गलाता-ढालता और अपनी ही दूकान पर तरह-तरह की चीज़ें तैयार कर लेता था। उनको खुद ही बेच आता था और सुख से अपने बाल-बच्चों के बीच रहता था। न वह किसी कारख़ानेदार का गुलाम था, न उसे बेकारी का डर था।

पहले ज़माने में किसान की हालत अच्छी थी। वह क़र्ज़दार न था। उसके घर का ही बीज-खाद रहता था। उसके घर के ही हल-बैल-गाड़ी थे। उसके खूब पशु थे। वह अपने ही कुटुम्ब के स्त्री-पुरुषों की सहायता से खेती करता था और सुख से रहता था। गाँवों में तो पैसे का भी चलन न था। अनाज से या कौड़ियों से सौदा हो जाता था।

आजकल तो, व्यापार दूर-दूर देशों से, मोटर-रेल-जहाज़ से, डाक, तार, जहाज़, और हवाई-जहाज की मदद से, चलता है, जिससे सारी दुनिया में भारी व्यापार करके व्यापारी अरबों-ख़रबों रुपया कमाते हैं। पर पहले ज़माने में मामूली व्यापार होता था और व्यापारी मामूली मालदार रहते थे। पहले बड़े-बड़े व्यापारी भी हाथ से महनत करते थे, उनके घर की स्त्रियाँ घर का काम-काज करती थीं। वे सब लोगों के बीच में बैठते-उठते थे, और ग़रीब-अमीर का भेद दिखाई नहीं देता था।

पहले ज़माने में परिश्रम करनेवाली जनता क़र्ज़दार न थी, इसलिए सूद खाकर मौज करनेवाले साहूकार या बैङ्क न थे। पहले सबके पास घरू मकान थे, इसलिए किराया खानेवाले मकान-मालिक भी न थे। पहले ठेकेदार नहीं थे। पहले कम्पनियाँ और कारख़ाने नहीं थे, इसलिए उनके मुनाफ़ों पर बेफ़िक्र जीवन बितानेवाले पूँजीपति लोग भी नहीं थे। पहले के ज़माने में उद्योगवाद और पूंजीवाद आजकल की तरह बढ़ा हुआ न था।

मनुष्य-जाति गुलामी में कैसे फँसी ?

परिश्रम करने वाले सभी मनुष्य पहले स्वाधीन थे, पर धीरे-धीरे पूँजीवादी मालिकों की गुलामी में फँस गए। मनुष्य-जाति की पराधीनता तभी से शुरू हुई जब से क़ुदरत या परमात्मा की दी हुई ज़मीन को कुछ ज़बरदस्त लोगों ने अपनी कह कर क़ब्ज़ा कर लिया। यह लोग ठाकुर, ज़मींदार, ताल्लुकेदार कहलाने लगे। पहले तो इन लोगों ने गांव के खेतों का इन्तज़ाम करने और रैयत को सुख पहुँचाने के बहाने क़ब्ज़ा किया। पर बाद में यह हाल हुआ कि ये लोग ज़मीन को अपनी ही कहने लगे, और आज चाहे जिसको खेती करने देते हैं, और चाहे जिसको खेती से हटा देते हैं। मनमाना लगान माँगते हैं और उसके बदले में, अदालत की मदद से, किसान का घरबार माल बिकवा देते हैं। ज़मीन-मालिकों ने ग़रीबों में से ही कुछ बलवान लोगों को नौकर रख लिया, और ग़रीब महनत करनेवालों को दबाने के लिए अपना सेना-दल या जत्था तैयार कर लिया। ज़मीन-मालिकों में से जो ज्यादा ज़बरदस्त निकले और जिनके पास ग़रीबों को दबानेवाला गुण्डा-दल ज्यादा था वह अनेक गाँवों के बड़े मालिक बन गए। जो उनसे भी ज्यादा ज़बरदस्त सेनावादी हुए, वह बड़े बादशाह बन गए। परिश्रम करनेवाली रैयत की गुलामी धीरे-धीरे बढ़ती चली गई। मगर इन्साफ़ की बात यह है कि देश, मुल्क, इलाक़ा, ज़मीन, जंगल, खान, समुद्र, नदी वग़ैरा किसी एक आदमी या एक जाति की मिल्कियत या बपौती नहीं बन सकती। यह सब चीज़ें तो सब मनुष्यों

के लिए कुदरत या परमात्मा ने पैदा की हैं। इनका इन्तज़ाम करने का अधिकार वहाँ की सारी जनता को ही है। सारी जनता में सभी स्त्री-पुरुष, ग़रीब-अमीर, नीच-ऊँच और हर-एक जाति और धर्म के सब लोग शामिल हैं। जितने देश और राज्य हैं वहाँ की सारी जनता वहाँ की मालिक है, उसी की राय से वहाँ राज्य-व्यवस्था चलनी चाहिए। इतिहास बताता है कि ज़मींदार, ठाकुर, राजा या नवाब लोगों ने बसनेवाली जनता को, ताक़त के ज़ोर से, ज़बरदस्ती, दबाकर ज़मीन अपनी बना ली और मुल्क की आमदनी को अपने ऐश-आराम और फ़िज़ूल-ख़र्चियों में खर्च करते रहे। जनता ने फ्रान्स अमेरिका रूस चीन आदि मुल्कों में बादशाहों को हटा दिया और खुद राज्य का इन्तज़ाम करने लगी। अब जनता ज़मींदारों या बादशाहों के स्वार्थों को समझ गई है और उनकी झूठी मिल्कियत को नहीं मान सकती। पंचायती ढंग से राष्ट्रीय शासन या इन्तज़ाम करने का पूरा हक़ जनता को ही है। अगर जनता न चाहे तो किसी सरकार या राजा या नवाब को इन्साफ़न कोई हक़ नहीं है।

ज़मीन पर ज़मींदारों या राजाओं के क़ब्ज़ा कर लेने से गाँवों की जनता इन ज़मींदारों या राजाओं की गुलामी में फँस गई और दरिद्र होने लगी। लगान बढ़ाने से दरिद्रता बढ़ने लगी। जब से राज्य ने सिक्का चलाया और लगान, अनाज के रूप में न लेकर, सिक्कों के रूप में लेना शुरू किया तब से परिश्रमी जनता बिलकुल पराधीन हो गई। क़र्ज़दार होकर वह सूदख़ोर साहूकारों की गुलामी में फँस गई। अपने घर पर स्वाधीनता से काम करनेवाले घरू कारीगर तब से गुलाम हो गए जब से मशीनें और कारख़ाने क़ायम हुए। मालदार मालिकों ने देखा कि भाप व बिजली से चलनेवाली मशीनों को निकाल कर साइन्स ने उन्हें ज्यादा मालदार बनने और घरू कारीगरों का धन्धा नष्ट करने और उन्हें मोहताज बनाने का अच्छा ज़रिया बता दिया। बस, कारख़ाने धड़ाधड़ क़ायम होने लगे। अगर ये कारख़ाने राष्ट्र की तरफ़ से पञ्चायती रूप में क़ायम होते तो जनता के लिए ठीक होता। पर

राष्ट्र-संचालकों ने ध्यान न दिया और जनता बेख़बर रही। नतीजा यह हुआ कि कारख़ानेदारों ने हर तरह के कारख़ाने अपने निजी फ़ायदे के लिए चलाने शुरू किए, कम मज़दूरी दी, और मालामाल हो गए। कारख़ानों के सबब से माल थोकबन्द सस्ता और एकसार बनने लगा। घरू कारीगरों के धन्धे नष्ट हो गए। घरू कारीगर बेकार और मोहताज हो गए। हर धन्धे की मशीन बन गई। खेती की मशीन, कपड़े बुनने की मशीन, कपड़े सीने की मशीन, लकड़ी चीरने की मशीन, तेल निकालने की मशीन, आटा पीसने की मशीन और रोटी बनाने तक की मशीन हो गई। मशीन के ज़रिये से एक-एक आदमी सौ-सौ आदमी के बराबर काम करने लगा। नतीजा यह हुआ कि ९९ कारीगर बेकार हो गए। इसी से आज करोड़ों आदमी बेकार फिरते हैं और भूखों मरते हैं। इसी व्यवस्था को उद्योगवाद कहते हैं। उद्योगवाद ने ग़रीबों को बेहद ग़रीब बना दिया और थोड़े से पूँजीवादियों को बेहद मालदार बना दिया। ग़रीब-अमीर का भयंकर भेद-भाव हो गया। अमीर लोग महलों में रहने लगे, मोटरों में बैठने लगे, हवाई जहाज़ों में उड़ने लगे और उन्होंने ग़रीबों में बैठना-उठना छोड़ दिया। पूँजीवादी व्यवस्था में उपयोगी महनत करना मालदारों ने छोड़ दिया। कुछ लोग किराये की कमाई पर गुलछर्रे उड़ाने लगे, और कुछ लोग मुनाफ़े की कमाई से चैन की बन्सी बजाने लगे। कुछ लोग सट्टे-सौदे से मालामाल हो गए, और कुछ लोग ठेकेदारी से परिश्रमी लोगों को चूसने लगे। मालदारों ने क़र्ज़ों में ग़रीबों के खेत-घर-द्वार-ज़ेवर-बर्तन सब बिकवा लिए।

विदेशी राज्य से कंगाली

आज हिन्दुस्तान पर अंग्रेज़ों का राज्य है। इसी तरह इंग्लैंड देश की हुकूमत एशिया और अफ़्रिका के और भी कई देशों के ऊपर है, जहाँ के लोग अंग्रेज़ों की अधीनता में हैं। इंग्लैंड ने ही नहीं, बल्कि फ्रान्स, हॉलैण्ड, बेल्जियम, इटली, जर्मनी, अमेरिका आदि देशों ने भी अफ़्रिका व एशिया में और दुनिया के दूसरे हिस्सों में, जहाँ कमज़ोर जातियाँ मिलीं वहीं, अपना साम्राज्य जमा लिया। इन साम्राज्यवादी देशों ने अपना

व्यापार बढ़ाने के लिए, कच्चा माल आसानी से पाने के लिए और अपना तैयार माल बेचने के लिए, तथा हर तरह से धन कमाने के लिए इन कमज़ोर देशों पर क़ब्ज़ा कर लिया। एक देश या जाति का दूसरे देश या जाति पर क़ब्ज़ा कर लेने का नाम ही साम्राज्यवाद है। जब एक देश की हुकूमत दूसरे देश पर हो जाती है तो हुकूमत करनेवाला देश पराधीन देश का धन चूस लेता है, उसको कंगाल और भुखमरा बना देता है, उसके धन्धे नष्ट कर देता है और अपने माल की बिक्री बढ़ाता है। हुकूमत करनेवाला देश पराधीन देश में अपनी कम्पनियाँ खोल देता है और मुनाफ़ा उठाता है, देशी धंधों को बढ़ने नहीं देता। अपनी जाति के लोगों को अफ़सर बनाकर भारी भारी तनख्वाहें व पेन्शनें दिलाता है, जनता के ऊपर भारी-भारी टैक्स लगाता है, अपनी फ़ौज पराधीन देश पर रखता है और उसका ख़र्चा पराधीन देश से दिलवाता है, और उसी फ़ौज से उस देश को दबाए रखता है, उस देश के ऊपर क़र्ज़ा लाद देता है और खुद उसका खूब ब्याज लेता है। इन्हीं तरकीबों से अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद ने हिन्दुस्तान का धन चूस लिया और चूस रहा है। इसी कारण हिन्दुस्तान कङ्गाल हो गया। इसको बड़े-बड़े अंग्रेज़ों ने भी माना है। इंग्लैंड के मौजूदा प्रधान-मन्त्री श्री मैकडोनैल्ड ने लिखा है ' जब देश के बाहर जानेवाला धन इतना अधिक है तो सुख-समृद्धि फैल नहीं सकती। " श्री एच० एम० हाइंडमैन ने लिखा है, " विदेशी सरकार और भी ज्यादा ख़र्चीली हो गई है और ऐसे-ऐसे उड़ाऊपन के ख़र्चे हो रहे हैं, जैसे कि ढाका और दिल्ली में बिलकुल व्यर्थ नई राजधानियों का बनाना और उनके पीछे करोड़ों रुपयों का बेकार खून होना। इस उड़ाऊ और घातक पद्धति के साथ-साथ चलने के लिए मालगुज़ारी और भी कड़ाई के साथ वसूल की जाती है और किसान दिन पर दिन कंगाल होता जाता है।" हिन्दुस्तान की क़रीब-क़रीब आधी सरकारी आमदनी फ़ौज पर खर्च कर दी जाती है। फ़ौज के बारे में मैकडोनेल्ड साहब लिखते हैं। " भारत में जितनी सेना रहा करती है उसका बहुत बड़ा भाग—आधे में तो कोई सन्देह नहीं—साम्राज्य

की सेना है, जिसे शुद्ध भारत के काम के लिए नहीं, बल्कि और मतलबों से हमें रखने की ज़रूरत है इसलिए उसका खर्चा हिन्दुस्तानी आमदनी से नहीं लेना चाहिए, बल्कि साम्राज्य से मिलना चाहिए।" हिन्दुस्तान के सिर पर अरबों रुपया क़र्ज़ा लादा गया है, जिसका ब्याज करोड़ों रुपया हर साल हिन्दुस्तान के ख़ज़ाने से चला जाता है। क़र्ज़े के बारे में मैकडोनेल्ड साहब लिखते हैं—" परन्तु उधार ली हुई पूंजी से रेलवे के और दूसरे काम इस तरह किए गए जिनके लिए युद्ध के दफ्तरों में योजनाएँ बनी थीं। बात यह हुई कि फ़ौजी खर्च ने रेलवे की बढ़न्ती का रूप धारण कर लिया था।" अंग्रेज़ों की पेन्शनों में करोड़ों रुपया चला जाता है। इसके बारे में मैकडोनेल्ड साहब लिखते हैं—" विदेशी-सरकार के मातहत यह वह खर्चे हैं जिनके बदले में एक पाई भी वसूल नहीं होने की है। यह खर्च दोहरी चिन्ता के कारण हैं, क्योंकि यह केवल भारत की उपज से ही दूर नहीं किये जाते, बिलकुल बाहर निकाल लिये जाते हैं।" हिन्दुस्तान के एक रुपये का भाव इंग्लैण्ड के १८ पेन्स रहने से हिन्दुस्तान को करोड़ों का नुक़सान रहता है। हिन्दुस्तान का सोने का रिज़र्व ख़जाना भी विलायत में रखा जाता है। विलायत से आने वाली चीज़ों से हिन्दुस्तान का धन परदेश चला जाता है। सन १९२७-२८ में, ५८ करोड़ रुपयों का कपड़ा, ७ करोड़ की रुई, २१ करोड़ का लोहा, ७ करोड़ की पीतल, १६ करोड़ के कल-पुर्जे, १५ करोड़ की चीनी, ६ करोड़ की मोटर, इत्यादि बाहर से आये। करोड़ों रुपयों का खाने-पीने का सामान, तम्बाकू, मसाला, रङ्ग, रबर, काँच, दवाई, नमक, साबुन, स्टेशनरी, जूते, श्रृङ्गार व खेल का सामान वगैरः भी आया। जब इस तरह से पैसा बाहर चला जा रहा है तो हिन्दुस्तान में करोड़ों आदमियों का कङ्गाल बेकार और भूखा रहना स्वाभाविक बात है।

जो देश साम्राज्यवाद का शिकार हुआ वही कंगाल हो गया। आज जापानी साम्राज्यवाद में दबे हुए कोरिया और मञ्चूरिया देश भारी कष्ट उठा रहे हैं। साम्राज्यवाद के कारण कमज़ोर जातियाँ

गुलाम बनीं और हुकूमत करनेवाली जातियों में अत्याचार और लोभ की आदत पड़ी।

साम्राज्यवाद

पहले कह चुके हैं कि एक देश या जाति का दूसरे देश या जाति पर क़ब्ज़ा कर लेने का नाम ही साम्राज्यवाद है।

व्यापार और साम्राज्य बढ़ाने के लिए साम्राज्यवादी देशों में खूब होड़ होने लगी। पिछली जर्मनी की लड़ाई इसी का नतीजा था। अब भी पूञ्जीवादी और साम्राज्यवादी जातियाँ युद्ध करने के हथियार, तोप, गोले, जहाज़, ज़हरीले गैस वग़ैरः गुप्त रूप से बना रही हैं। बहुत सम्भव है कि कुछ दिनों बाद बड़ा भारी युद्ध हो। पैसा बहुत अधिक बढ़ जाने से एक नए तरह का साम्राज्यवाद पैदा हुआ है, जिसे आर्थिक साम्राज्यवाद कहते हैं। एक देश दूसरे देश को रेल या कारखाने आदि खोलने के लिए करोड़ों अरबों रुपया कर्ज़ दे देता है और उस देश से व्यापारिक फ़ायदा उठाता है। इस प्रकार आज अमेरिका ने संसार के सभी देशों को क़र्ज़ा दे रखा है और सब पर अपना असर डाल रखा है। आज दुनिया में बड़े-बड़े बैङ्कों का ही राज्य है। बैङ्क चाहें तो दुनिया में चीज़ों को महँगा करदें, बैंक चाहें तो दुनिया में सस्ताई कर दें। बैंक चाहें तो बेकारी मिटा दें। बैंक चाहें तो बेकारी बढ़ा दें। बैंक चाहें तो दुनिया को खुशहाल कर दें और बैंक चाहें तो दुनिया को भूखों मार डालें। ग़रीब जनता बेचारी पूञ्जीवादियों के चक्र में पराधीन हो गई है। इसीलिए ज़रूरी हो गया है कि कारखाने, व्यापार और बैंक व्यक्तिगत नहीं रहने चाहिए बल्कि पञ्चायती हाथों में—साम्यवादी राष्ट्र के क़ब्ज़े में-रहने चाहिए।

समाज-व्यवस्था का बदलना यानी क्रांति

कहने का मतलब यह है कि मौजूदा सारी समाज-व्यवस्था, दुनिया का सारा निज़ाम, उलटा और ग़लत है। इल्म और साइन्स ने तरक्क़ी तो बहुत की, पर वह पूँजीवाद के स्वार्थी हाथों में पड़ गई। इससे सारी दुनिया दरिद्र, बेकार और दुःखी हो गई। हम

नहीं कहते कि इस उलटी व्यवस्था, इस दुःखदायी सभ्यता, इस सारी बद-इन्तज़ामी में किसी एक पूँजीपति का दोष है। किसी एक सूदख़ोर, मुनाफ़ेख़ोर या ज़मींदार, कारख़ानेदार, ठेकेदार या व्यापारी का दोष नहीं है, क्योंकि यह तो पूँजीवादी समाज-व्यवस्था के एक एक पुर्ज़े हैं। यह दोष तो सारी पूँजीवादी प्रणाली का है जिसमें अलग-अलग आदमी अलग-अलग कुदरती चीज़ या समाजोपयोगी साधन का मालिक बना बैठा है। सम्पति का बुद्धि और न्याय संगत उपयोग होने के लिए एक राष्ट्रीय योजना के अनुसार उसका उपयोग होना चाहिए, जोकि अलग-अलग मिल्कियतदारों के कारण नहीं होने पाता। जिस तरह एक परिवार में झाड़ने, पानी भरने, पीसने, पकाने, सामान लानेवाले अलग-अलग व्यक्ति अपने मनमाने वक्त पर, मनमाने तरह से या मनमाने परिमाण में अपने काम करने लगें, या ऐसा हो कि कुछ व्यक्ति तो काम ही न करें, और कुछ को काम से फुरसत ही न मिले और उनका जीवन पशुवत हो जावे तो ऐसा परिवार सुखी नहीं हो सकता। इसी तरह समाज भी व्यक्तिगत पूँजीपतियों के अधीन सुखी नहीं रह सकता। पूँजी बुरी चीज़ नहीं है, पर पूँजीवाद बुरा है। सारी मनुष्य जाति को सुख पहुँचाने के लिए इसको बदल डालना होगा। इस बदलाव या परिवर्तन का ही नाम क्रान्ति है, जिससे पूँजीवादी लोग व्यर्थ डरते हैं। अगर मनुष्य-समाज की हालत इस तरह से सुधारनी है कि जिसमें दरिद्रता, बेकारी और भूख मिट जाय और सब लोगों को जीवन-सामग्री की कमी न रहे, जिसमें कोई भी आदमी पैसे के लिए किसी के अधीन न रहे, जिसमें सब नागरिक सुशिक्षित और तन्दुरुस्त रहें और इंसान की तरह सुखी जीवन बिताएँ, तो ग़रीब किसानों और मज़दूरों को सब कुदरती चीज़ों और उत्पत्ति के साधनों को व्यक्तिगत मालिकों के क़ब्ज़े से हटाकर पंचायती राष्ट्र के हाथों में लेना पड़ेगा। व्यापार और आर्थिक प्रबंध सारा पंचायती बनाना पड़ेगा और हर एक शख्स की आमदनी बराबर करनी पड़ेगी। अगर मनुष्य-समाज को इस

तरह का बनाना है कि किसानों और मज़दूरों को भी सात्विक आनन्द का अवकाश मिल सके, सब में स्वार्थ कम होकर प्रेम बढ़े और सामाजिक नियम या क़ानून मनुष्य-मात्र को सुखी बनाने की निगाह से बना करें, तो पूँजीवाद को मिटाना पड़ेगा और साम्यवाद (सोश्यलिज़्म) क़ायम करना होगा।

साम्यवाद कोई नई या अपरिचित चीज़ नहीं है। आजकल भी कुछ-कुछ साम्यवादी नमूने हमारे सामने हैं, जैसे पंचायती (सार्वजनिक) सड़कें, बाग़, अजायबघर, पानी के नल, पुल, और डाक, तार, टेलीफ़ोन तथा सिविल व मिलिटरी नौकरियों के महकमे। इसी तरह जो-जो चीज़ें दुनिया के काम की हैं—जैसे ज़मीन (खेत) जंगल, खानें, औज़ार और हर क़िस्म के कारख़ाने, दुकानें, लेन-देन, बैंक यह सब राष्ट्र के हाथ में हो जाना चाहिये। साथ ही जो-जो चीज़ें दुनिया के लिए ज़रूरी हैं जैसे अस्त्र-शस्त्र, कला, विज्ञान, साहित्य, इन पर भी पंचायती राष्ट्रीय इन्तज़ाम होना चाहिए। परन्तु यह निश्चित है कि मौजूदा फ़ायदा उठाने वाले पूँजीपति लोग आसानी से सारी व्यवस्था बदलने न देंगे। पहले तो वे क़ानून की मदद से लाखों ग़रीब किसानों और मज़दूरों को बे-घरबार कर देंगे, उन्हें जेलों में डालेंगे और गोलियों से मारेंगे। सरकारें तथा अदालत, जेल, पुलिस, फ़ौज यह सब ताक़तें पूँजीपतियों की रक्षा करेंगी। मध्यम-वर्ग के लोग और बहुत से ग़रीब लोग भी पूँजीवादियों से जा मिलेंगे। परन्तु फिर भी अगर सब ग़रीब लोग मिलकर एक हो जाएँ तो वे ज़रूर समाज-व्यवस्था को बदल सकते हैं।

अभी से दिन-रात इस भावी परिवर्तन का ही विचार ग़रीबों को करना चाहिए, दिन-रात इस भावी परिवर्तन की किताबें ही ग़रीबों को पढ़नी चाहिए। उन्हें पूँजीवाद, साम्यवाद, अर्थशास्त्र, राजनीति, समाज-शास्त्र का खूब अध्ययन करना चाहिए। हर जगह ऐसे विषयों के अध्ययन-मण्डल क़ायम करने चाहिए। किसानों को गाँव-गाँव में अपने संघ बनाने चाहिए। तमाम मिलों, कारख़ानों, प्रेसों के कारीगरों और

सि...वटों, हम्मालों, गाड़ीवानों, मोटर ड्राइवरों, बुनकरों, धोबियों, ...तरों और हर पेशे के मज़दूरों और नौकरों को अपने-अपने संघ ...ाने शुरू कर देने चाहिए। तमाम बेकार ग़रीबों को भी अपने संघ ...ाने चाहिए। पढ़नेवाले विद्यार्थियों और नौजवानों में साम्यवाद का ...चार करने के लिए उनसे स्कूल कॉलेजों के पास या उनके घरों पर जाकर ...लना जुलना चाहिए। मज़दूरों और किसानों को अपने स्वयंसेवक-...ल खड़े करने चाहिए। धार्मिक और जातीय मेल-जोल बढ़ाने के लिए ...पने ब्याह-शादी, त्यौहारों के मौक़ों पर दूसरे धर्मों और जातवालों ...ो भी बुलाना चाहिए। मध्यमवर्ग के चलाए हुए स्वतन्त्रता आन्दोलन ... साम्यवादियों को प्रमुख भाग लेना चाहिए, बल्कि उसका नेतृत्व ...रना चाहिए। यह सब काम अभी से शुरू कर देने चाहिए, और सारे ...ीबों को मिलकर पूँजीवाद की पराधीनता से छुटकारा पाना चाहिए। ...ाम्यवाद से पूँजीपतियों को भी डरने की ज़रूरत नहीं है। वह साम्य-...दी व्यवस्था में, किसानों और मज़दूरों के राज्य में, आज से ज्यादा ...स्तविक सुख पा सकेंगे।

भविष्य की समाज-व्यवस्था कैसी होगी ?

भविष्य में नई समाज-रचना या नया साम्यवादी राज्य कैसा ...नेगा इसका थोड़ा-सा दिग्दर्शन नीचे कराया जाता है—

१. हमारा देश हिन्दुस्तान सब से पहले पूरी तरह आज़ाद ...ोगा। विदेशी साम्राज्यवाद की हमें ज़रूरत नहीं है। हरएक देश को आज़ाद रहने का हक़ है। हम अपने देश का आप ही पंचायती इन्तज़ाम करेंगे। देश की फ़ौज, ख़ज़ाना, रुपया-पैसा, देश-देशान्तर का व्यापार या विदेशी काम-काज और देश के अन्दर का सारा इन्तज़ाम देशवासी लोग ही करेंगे। उत्पत्ति करनेवाली जनता के हाथ में राज्य की सारी ताक़त रहेगी।

२. हिन्दुस्तान के रहनेवाले सब लोग समानता, स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव से रहेंगे। पंचायती राज्यशासन में देश के सब जातियों व सब धर्मों के बालिग़ स्त्री-पुरुष वोट (राय) दे सकेंगे। योग्य चुने

हुए मेम्बरों की महासभा के हाथ में देश का पंचायती राज्य होगा खेती, आबपाशी, ट्रान्सपोर्ट, कारखाने, व्यापार, शिक्षा, फ़ौज पुलिस, अदालत वग़ैरः अलग-अलग सब महकमों के लिए देश की पंचायत की तरफ़ से हिन्दुस्तानी मंत्री मुक़र्रर होंगे।

३. ज़मींदारी न रहेगी और उसका इन्तज़ाम गाँव के किसानों की चुनी हुई कमेटी करेगी। सारी खेती पंचायती ढंग पर इकट्ठी होगी, या सहयोग-समिति के उसूल पर होगी (या जैसा गाँव-कमेटी ठीक समझे उस ढंग से होगी।)

४. किराया लेनेवाले मकान-मालिक न रहेंगे। मकानात सब पंचायती रहेंगे और उनका इन्तज़ाम नगर-समिति करेगी।

५. व्यापार राष्ट्रीय महासभा के हाथ में रहेगा। राष्ट्रीय पंचायती दुकानें खुल जावेंगी। साम्यवादी स्कीम के अनुसार राष्ट्रीय व्यापार चलेगा। विदेश से व्यापार करने का एकाधिकार पंचायती राज्य के हाथ में रहेगा।

६. सभी तरह के कारख़ाने राष्ट्र के होंगे और मज़दूरों के नियन्त्रण में रहेंगे, जिससे मज़दूरों को मनुष्योचित पगार, काफ़ी फ़ुरसत खूब शिक्षा, अच्छी तन्दुरुस्ती प्राप्त हो सके; और माल की उत्पत्ति साम्यवादी राष्ट्रीय स्कीम के अनुसार होगी।

७. बैंकिंग और लेन-देन पंचायती राज्य के हाथ में रहेगा। सूदख़ोरी, ठेकेदारी न रहेगी। इनका ज़रूरी इन्तज़ाम राष्ट्र की तरफ़ से होगा।

८. यातायात के साधन, जैसे गाड़ी, मोटर, रेल, जहाज़, हवाई-जहाज़ और डाक, तार, बेतार वग़ैरः भी राष्ट्र के पंचायती इन्तज़ाम में रहेंगे।

९. शिक्षा का ऐसा इन्तज़ाम किया जायगा जिससे कोई भी आदमी अशिक्षित न रहेगा। इंजीनियरिंग, कृषि और उद्योग-धन्धों की शिक्षा का सबको सुभीता किया जायगा।

१०. पंचायती राष्ट्र की तरफ़ से बेकार बूढ़े, कमज़ोर, बीमार

स्त्री-पुरुषों, और गर्भवती स्त्रियों के लिए मुनासिब इन्तज़ाम किया जायगा।

११. किसानों व मज़दूरों के क़र्ज़े हटा दिए जाएँगे। कोई क़र्ज़दार न रहेगा, कोई ग़रीब न रहेगा। न कोई धन इकट्ठा कर सकेगा। धन-संग्रह और व्यक्तिगत सम्पत्ति न होगी तो उत्तराधिकार (विरासत) का सवाल ही न रहेगा।

साम्यवादी शासन-प्रबन्ध मौजूदा पूँजीवादी हालत से हज़ार दर्जे अच्छा होगा। आजकल किसान और मज़दूर दोहरी ग़ुलामी में हैं। उन्हें देशी पूँजीवादी और विदेशी पूँजीवादी (साम्राज्यवादी) दोनों ही चूस रहे हैं।

परिश्रम करनेवाली जनता करोड़ों की गिनती में है और ज़मींदार, साहूकार, कारख़ानेदार आदि पूँजीपति गिनती में बहुत थोड़े हैं। फिर भी परिश्रम करनेवाले लोग पूँजीपतियों के मोहताज हैं। हर ग़रीब को समझ लेना चाहिए कि पूँजीवादी समाज-व्यवस्था मिटाने ही योग्य है, क्योंकि वह अस्वाभाविक और दुःखदायी है।

रोटी रहते हुए भूखे क्यों हैं ?

दुनिया में आजकल करोड़ों आदमी भूखों मर रहे हैं, इसका क्या कारण है ? क्या दुनिया में अनाज की कमी है ? क्या दुनिया में खेती के लिए ज़मीन नहीं रही ? क्या दुनिया में खेती के लिए साधन या औज़ार नहीं रहे ? क्या खेती करने के लिए आदमी नहीं मिलते ? नहीं, सभी चीज़ें मौजूद हैं। खेती के लायक़ ज़मीन सारे भूमंडल पर और हर एक देश में इतनी पड़ी है कि हर एक आदमी का पेट भर सकता है। अनाज व्यापारियों के कोठों में इतना भरा पड़ा है कि सब का पेट भर कर भी बच सकेगा। खेती के औज़ार भी दुनिया में बहुत हैं। बल्कि मशीनों और साइन्स के ज़रिए ज़मीन की पैदावार दसगुनी बीसगुनी बढ़ सकती है। करोड़ों बेकार आदमी मौजूद हैं, जो खेती के काम में लगाये जा सकते हैं। फिर भी लोग भूखे क्यों हैं ? सच बात यह है कि खेतों के व्यक्तिगत मालिक ज़मींदार बन बैठे हैं जिससे

सारी जनता के हित का ध्यान रखनेवाली एक राष्ट्रीय योजना से खेती नहीं होने पाती। अनाज के व्यक्तिगत मालिक व्यापारी बन बैठे हैं, जिससे सारी जनता को अनाज मिलने की व्यवस्था बिगड़ गई है। इसीलिए खेत और अनाज होते हुए भी दुनिया भूखी फिर रही है।

दुनिया में आज करोड़ों स्त्री-पुरुष और बच्चे नंगे बदन या चिथड़े पहने हुए घूम रहे हैं, इसका क्या कारण है? क्या दुनिया में कपड़ा नहीं रहा? क्या दुनिया में कपड़ा बनाने के औज़ार या यंत्र नहीं रहे। क्या दुनिया में रुई ख़तम हो गई? क्या कपड़ा बनाने के लिए आदमी नहीं रहे? नहीं, सभी चीज़ें मौजूद हैं। कपड़ा बाज़ारों और गोदामों में इतना भरा पड़ा है कि दुनिया के सभी स्त्री-पुरुष तन ढक सकते हैं और ठंड से बच सकते हैं। हाथ-कर्धे और मिलें भी दुनिया में इतनी हैं कि सबको कपड़ा मिल सकता है। रुई की दुनिया में कमी नहीं है, बल्कि अमेरिका के पूँजीपति ज्यादती को कारण बता कर रुई व अनाज को बरबाद कर रहे हैं। कपड़ा बुनने के लिए आदमियों की कमी नहीं है, क्योंकि पूँजीवाद की कृपा से करोड़ों लोग अभी तो बेकार हैं। फिर रुई औज़ार और कपड़ा होते हुए लोग नंगे क्यों हैं? इसका सच्चा कारण यह है कि रुई व कपड़े के व्यक्तिगत मालिक व्यापारी बन बैठे हैं और औज़ारों और मिलों के मालिक कारख़ानेदार बन बैठे हैं। इसीलिए कपड़ा होते हुए भी दुनिया नंगी फिरती है।

आज करोड़ों आदमी टूटे छप्पर के नीचे या पेड़ों के तले रहते हैं, इसका क्या कारण है? क्या घरों की कमी है? अथवा क्या घर बनाने के लिए दुनिया में मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, लोहा बाकी नहीं रहा? क्या घर बनाने के लिए मज़दूर नहीं मिलते? नहीं सब चीज़ें मौजूद हैं। इस पृथ्वी-माता पर मिट्टी-पत्थर की कमी नहीं है। जंगलों में लकड़ी की कमी नहीं है। खानें लोहे से भरी पड़ी हैं। मकान बनाने के काम के लिए बहुत मेहनत करनेवाले मिल सकते हैं। फिर भी दुनिया बेघर है। इसका कारण यह है कि हर चीज़ का कोई न कोई आदमी अन्याय-पूर्वक मालिक बन बैठा है। मिट्टी पत्थर लेने

जाओगे तो मालिक आकर रोक देगा और कहेगा कि यह मेरी मिट्टी-पत्थर है। जंगल में से लकड़ी काटने लगोगे तो सरकार या ठेकेदार आकर पकड़ लेगा और जेलखाने में भेज देगा। अगर कहीं से सामान मिल गया और घर बनाने के लिये जगह ढूँढोगे तो वहाँ भी ज़मीन-मालिक आजायगा और कहेगा कि इस जगह मकान मत बनाओ यह मेरी ज़मीन है। तुम जहाँ क़दम रखोगे वहीं पर ज़मीन-मालिक आजायगा और तुम्हें हटा देगा। अगर तुम किसी के खेत में चले जाओगे तो खेत-मालिक वहाँ न रहने देगा। अगर तुम जंगल की हद में चले जाओगे तो जंगल का चौकीदार तुम्हें हटा देगा। अगर तुम शहर में किसी के मकान की हद में चले जाओगे तो मकानवाला तुम्हें वहाँ न रहने देगा। अगर तुम सड़क पर ज्यादा देर खड़े रहोगे तो पुलिस का सिपाही वहाँ से हटा देगा और म्युनिसिपैलिटी की कोई ज़मीन घेर लोगे तो तुम वहाँ भी ज्यादा अरसे तक नहीं रह सकते। इन व्यक्तिगत मालिकों ने इन्सान को पैर रखने के लिए भी जगह नहीं रखी है।

कहने का मतलब यह है कि इन्सान के काम आनेवाली हर उपयोगी चीज़ पर कोई न कोई फ़ायदा उठानेवाला मालिक बना बैठा है। ये ही पूँजीपति हैं। पूँजीपतियों ने अपनी मिल्कियत की रक्षा के लिए, इक़रार की स्वतंत्रता आदि सिद्धान्तों के बहाने सरकारी क़ानून बनवा लिये हैं; और ग़रीबों को दबाने के लिये ग़रीबों में से ही सिपाही नौकर रख लिये जाते हैं, जो फ़ौज और पुलिस में काम करते हैं, जिनका काम दुनिया को पकड़ना, जेलों में बंद करना, और आदमी की जान लेना है।

मनुष्य-समाज की यह व्यवस्था बदलनी चाहिए। नया इन्तज़ाम साम्यवाद (पंचायत) के ढंग पर होना चाहिए। अगर घर में रोटी होते हुए भूखों मरें, और कपड़ा रहते हुए नंगे फिरें तो बड़े ताज्जुब और बेवकूफ़ी की बात होगी। यही बात आज दुनिया में पूँजीवाद के कारण हो रही है। अनाज है और हो सकता है, और परिश्रम करनेवाले मौजूद हैं, फिर

भी दुनिया भूखी फिर रही है। कपड़ा है और बन सकता है और बनाने के लिए आदमी मौजूद हैं, फिर भी दुनिया नंगी है, फटे-हाल घूमती है। घर सैकड़ों हज़ारों ख़ाली पड़े हैं और नये बनाने के लिए सामान व आदमी मौजूद हैं फिर भी लोग बेघर हो रहे हैं। मनुष्य-जाति की इस हास्यास्पद, मूर्खतापूर्ण हालत का कारण समाजोपयोगी चीज़ों पर व्यक्तिगत स्वामित्व या निजी मिल्कियत है। इसके लिए एक उदाहरण उपयुक्त होगा। एक गाँव में पानी पीने के लिए और खेती करने के लिए लोगों ने एक कुँआ बनाया, परन्तु उस पर एक ज़बरदस्त आदमी अधिकार कर बैठा। वह अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ चाहे जिसको पानी पीने देता है और चाहे जिसको पानी नहीं पीने देता। वह किसी को बिना ज़रूरत बहुत पानी दे देता है और किसी को ज़रूरत से कम देता है और किसी को ज़रूरत होने पर भी नहीं देता। जब खेत में पानी की ज़रूरत होती है तब वह आदमियों को पानी देता है और जब आदमियों को पानी की ज़रूरत होती है तब वह खेत को पानी देता है, नतीजा यह होता है कि आदमी भी प्यासे रहते हैं और खेत भी सूख जाता है। यही हाल पूँजीवाद और पूँजीपतियों का है। ज़मींदार खेत ख़ाली पड़े रहने देता है, पर ग़रीबों को खेती नहीं करने देता, अथवा जिस के घर में ४ आदमी हैं उसे २०० बीघा ज़मीन दे देता है और जिस के घर में २० आदमी हैं उसे १ बीघा ही ज़मीन देता है। वह चाहे जब, चाहे जिस किसान को खेती से हटा देता है। नतीजा यह होता है कि लोग भूखों मरते हैं। खेती की वैज्ञानिक पद्धति के लिए, बढ़िया औज़ारों के लिए, खाद-बीज के लिए, राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों के लिए, विद्या-प्रचार के लिए, कृषि व उद्योग की यान्त्रिक शिक्षा के लिए, स्वास्थ्य-वृद्धि के लिए, बच्चों और जच्चों की रक्षा के लिए, सड़कों और नहरों के लिए राष्ट्र को धन चाहिए। परन्तु धनपति तो भूमि, कारख़ाने व्यापार की बचत और मुनाफ़े को दबा के बैठे हैं या अनावश्यक उद्योगों में लगा रहे हैं या अपव्यय कर रहे हैं। धनपति अपना धन रखकर

कारखाने में लगाते हैं जब कि किसानों को खाद-बीज की कमी पड़ती रहती है, और वह अपने धन से खिलौनों का कारखाना कायम करते हैं जब कि लोगों को धनाभाव से रोटी नहीं मिलती। अहमदाबाद के मिलमालिक अपना कपड़ा कलकत्ते में बिकने को भेजते हैं और कलकत्ते के मिल-मालिक अपना कपड़ा अहमदाबाद में बिकने को भेजते हैं, जब कि दोनों ही शहरों में काफ़ी नंगे, चिथड़े-पहने लोग मारे-मारे फिरते हैं। ऐसी अस्वाभाविक समाज-व्यवस्था को बदलना हर ग़रीब किसान और मज़दूर का फ़र्ज़ है, और यह एकता और संगठन से ही हो सकता है।

मुनाफ़ा या लूट

एक एक चीज़ पर अनेकों पूँजीपति मिलकर बहुत मुनाफ़ा लगा लेते हैं। मान लीजिए कि एक थान कपड़ा विलायत से हिन्दुस्तान में आकर बिका। अब सोचिए इस पर कितने पूँजीपति और बीचवाले लोगों का मुनाफ़ा शामिल है। जिस कारखाने में थान बना उसके हिस्सेदारों का मुनाफ़ा, उसको बेचनेवाले का कमीशन, विलायत में गोदाम का भाड़ा व बीमा-कंपनी का ख़र्चा, जहाज़ तक लेजानेवाली मोटर-कंपनी का मुनाफ़ा, जहाज़-कंपनी का मुनाफ़ा, जहाज़ के बीमे का ख़र्चा, हिन्दुस्तान में थोक मँगानेवाले का मुनाफ़ा और बैंक का ब्याज, हिन्दुस्तान में मोटर कंपनी का ख़र्चा, गोदाम-भाड़ा और बीमा ख़र्चा, सरकार, म्युनिसिपैलिटी और रेल का टैक्स, तथा फुटकर बेचनेवाले छोटे व्यापारी का मुनाफ़ा। उस थान के लिए रुई अमेरिका से विलायत मँगाई गई थी, अतः रुई पर भी अनेक पूँजीपतियों का मुनाफ़ा लगा था। उस थान के लिए रंग लगा अथवा मशीनें काम में आईं, उनकी ख़रीद में भी अनेक पूँजीपतियों के दल का मुनाफ़ा शामिल रहा होगा। इसके बजाय साम्यवादी ढंग से उत्पत्ति हो तो इन मुनाफ़ेख़ोरों का ख़र्चा न लगे। एक-एक चीज़ पर पूँजीपतियों का दल इतना अधिक मुनाफ़ा लेता है कि वह लूट ही कही जा सकती है।

पूँजीवाद से नैतिक पतन

लूट के अलावा, पूँजीवाद ने समाज का घोर नैतिक पतन किय है। दुनिया में यह ख़याल फैल गया है कि इन्सानियत या परोपका या ऊँचे गुण पैसे के सामने कुछ भी नहीं हैं। पैसा ही दुनिया में सब बढ़िया चीज़ है। खुदा से ज्यादा पैसा पूजा जाने लगा, और सब लोग पैसा जमा करने में लग गए। इसका नतीजा यह हुआ की झू चालाकी, जालसाज़ी, धोखा, बेईमानी, भाई-भाई और बाप-बेटों ईर्षा-द्वेष, जुआ, लाटरी, सौदे-सट्टे, दिवाले, मुकदमेबाज़ी, रिश्वत, खू तक होने लगे। व्यापारिक विज्ञापन, प्रचार और होड़ में धन और सम बरबाद होने लगा और युद्ध भी इसी कारण हुए। हर देश में हर साल फ़ौज और पुलिस का ख़र्चा भी पूँजीवाद के कारण करना प रहा है। पूँजीपति इतने स्वार्थी होते हैं कि राष्ट्रीय त्याग के आन्दोल में, धर्म के नाम पर, और युद्धों में भी अपना स्वार्थ-साधन कर लेते हैं। यह तो प्रसिद्ध बात है कि भिन्न-भिन्न देशों के हथियारों कारखानेदारों ने जो कि स्वयं परस्पर मिले हुए हैं युद्ध कराए हैं औ उनसे निजी फ़ायदा उठाया है। धन बढ़ने के कारण इन्सान में घम आलस्य, व्यभिचार, अत्याचार बढ़ गए। परिश्रम न करने से औ ज्यादा खा लेने तथा भोगविलास से धनिकों में कई बीमारियाँ पैदा ह गईं। इधर पूँजीवाद ने ग़रीबी बढ़ा दी जिससे लोग बेपढ़े हो ग दीन और स्वाभिमानशून्य हो गए, बेहिम्मत और अत्याचार सहनेवा बन गए और ज़िम्मेदारी व तजुर्बे से ख़ाली रह गए। निर्धनता के कारण बहुत-सी स्त्रियाँ वेश्या का पेशा करके पेट भरने लगीं। भूखे लोग चोरी-डकैती खूब करने लगे। कुछ लोग कन्या बेचने लगे। विवाह गुण और प्रेम से न होकर धन को देखकर होने लगे। धनहीन भूखे चिन्तित लोगों के शरीर आमतौर पर कमज़ोर होने लगे, तन्दुरुस्ती बिगड़ने लगी, मौतें बढ़ गईं और सारी नस्ल कमज़ोर पड़ गई। मन पसन्द काम न मिलने से नापसन्द धन्धों में श्रमिकों को मजबूरन काम करना पड़ता है, जिससे आदमी या धन्धे की तरक्क़ी का रास्ता रुक जाता है।

पूँजीवाद के ज़माने में शिक्षा नकली हो गई क्योंकि वह मनुष्य के निजी झुकाव के मुनासिब न होकर कमाने के लिए हो गई। पूँजीवाद ने मेहनत की इज़्ज़त गिरा दी, जिससे कारीगरों, मज़दूरों, किसानों को कमीना कहा जाने लगा। बढ़ई, चमार, मेहतर जैसे मेहनत करनेवाले भले मनुष्यों को पूँजीवाद ने अछूत बना दिया। ऐसी ही बहुत-सी बुराइयाँ निजी मिल्कियत के सिद्धान्त से पैदा हुईं।

भिखारी और बेकार कौन हैं ?

हम सबने भिखारियों और बेकारों को देखा है। वह कितने दुःख और कष्ट उठाते हैं यह भी हम सब जानते हैं। जिन बेकारों को उनके दोस्त या रिश्तेदार मदद देते हैं उनका गुज़ारा तो किसी तरह चल जाता है, मगर जिनके कोई मदद देनेवाले नहीं होते उन्हें भूखों मरने के सिवाय दूसरा चारा नहीं रहता। तकलीफें बेहद बढ़ जाने पर कई बेकार आत्महत्या तक कर लेते हैं। बेकार लोग कुछ दिन तक तो भीख मांगने में शर्माते हैं, पर मजबूरन उन्हें शर्म छोड़ देनी पड़ती है और वे पक्के भिखारी बन जाते हैं। भिखारी लोगों को भी बहुत कष्ट होते हैं। वह स्वाभिमान छोड़कर गिड़गिड़ाते हुए सैकड़ों आदमियों के सामने हाथ पसारते हैं, और उनमें से ज्यादातर आदमी उन्हें इनकार करते, अपमानित करते और दुरदुराते हुए चले जाते हैं। कोई भी भला आदमी ऐसी ज़िन्दगी बिताना पसन्द नहीं करेगा। फिर क्या यह बेकार या भिखारी अपनी खुशी से बेकार या भिखारी बने हैं। नहीं, यह सब पूँजीवाद के सबब से बेकार या भिखारी बने हैं। समाज और राज्य उनकी पर्वाह नहीं करते। राज्य में रहनेवाले हर व्यक्ति को चुनाव (वोट) का अधिकार, भाषण, सम्मेलन व प्रकाशन की स्वतन्त्रता और व्यक्तिगत सुरक्षितता मिलना तो राजनैतिक अधिकार है, परन्तु हर आदमी को ठीक तालीम और रोज़गार मिलना तो इन्सानी हक़ है। राज्यशासन करनेवालों का फ़र्ज़ है कि राज्य में रहनेवाले हर आदमी को तालीम तन्दुरुस्ती और रोटी दिलवे। राज्य-शासकों के कुसूर से लोग बेकार और भिखारी हैं। बेकार लोग काम

करना चाहते हैं और अपने हाथ-पैरों की शक्ति से देश की पैदावारी बढ़ाना चाहते हैं परन्तु उनको काम नहीं दिया जाता। अगर बहुत से बेकारों या भिखारियों को इकट्ठा करके उनका इतिहास पूछा जाय तो मालूम होगा कि किसी को ज़मींदारों ने बरबाद किया, किसी को साहूकारों ने बरबाद किया, और किसी को सरकारों ने बरबाद किया है। और, कई लोगों के धन्धे बड़े बड़े कारख़ानों के खुलने से बरबाद होगए। जापान, इंगलण्ड आदि विदेशों से माल आने के कारण भी लाखों करोड़ों हिन्दुस्तानी लोग बरबाद और बेकार होगए। अगर ज़मीन पंचायती ग्राम-सभाओं के हाथ में होती तो सबको खेती के लिये ज़मीन देने का इन्तज़ाम होता, या पंचायती खेती करके सब का पेट भरने का इन्तज़ाम किया जाता। अगर हिन्दुस्तान अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद की गुलामी में न होता और आज़ाद प्रजातन्त्री राज्य होता तो हम विदेशी माल का आना रोक सकते और अपने धन्धे बढ़ाते। अगर कारख़ाने राष्ट्रीय और पंचायती होते तो उनका धन हिंदुस्तान की तरक्क़ी के लिए काम में आता, जिससे नए नए उपयोगी धन्धे खुलते। आजकल के कारख़ानों से थोड़े से पूँजीपति लोग ज़रूर मालदार हो गए हैं, परन्तु उनने छोटे धन्धेवाले लाखों कुटुम्बों को बेकार कर दिया है। इन सब कारख़ानों का मुनाफ़ा जनता के काम में नहीं आता। उससे तो कारख़ानेदार लोग मौज करते हैं। विलायती मुल्क लाखों करोड़ों रुपया बेकारों के वास्ते नए धन्धे खोलने और ख़र्चा देने में लगा रहे हैं। फिर भी जब तक साम्यवादी पंचायती आज़ाद राज्य क़ायम नहीं होगा तब तक बेकारी नहीं मिट सकती।

क्या पूँजीपतियों ने सम्पत्ति खुद बनाई है ?

इन मालदारों मालिकों और पूँजीपतियों से पूछो कि तुम जिन चीज़ों को अपनी पूँजी बनाये बैठे हो, और जिनके ज़रिए किसानों और मज़दूरों से मेहनत करवा कर खुद मौज करते हो, उनको तुम कहाँ से लाये थे। क्या तुमने परिश्रमी मज़दूरों के बिना अकेले ही इन चीज़ों

को बना लिया ? क्या ज़मींदार ने खुद ज़मीन पैदा की, या जंगल साफ़ करके खुद खेत बनाए ? क्या कारख़ानेदार ने ज़मीन में से लोहा निकाल कर खुद उसे ढाला, और खुद साँचे तैयार किये, और खुद औज़ार, पुर्ज़े, चूना, ईंट पत्थर और मकान तैयार किए ? क्या मकान-मालिक ने खुद ईंटें पकाईं, खुद ईंटें पकाने का ईंधन लाया, खुद गाड़ी बनाकर उसमें ईंटें ढोकर लाया; और क्या मकान-मालिक ने खुद लकड़ी पैदा की, खुद ही लकड़ी चीर कर मकान खड़ा किया ? दुनिया तो भूत और वर्तमान के सब मनुष्यों के सहयोग से बनी है और सभी के सहयोग से चल रही है। यह सब लोग कहेंगे कि हमने मज़दूरों से काम कराया और अपना पैसा लगाया। अब इन मालिकों से पूछो कि पहले पहल जब पैसे का चलन शुरू हुआ था तब क्यों शुरू हुआ था। पैसे का चलन दुनिया को सुख और सुभीता पहुँचाने के लिए शुरू हुआ था। अब अगर वही पैसा अधिक संग्रह हो जाने के कारण अथवा अस्वाभाविक अर्थ-प्रणाली के कारण दुनिया को दुःख देने लगे, अगर पैसा लोगों को भूखा-नंगा और बेघर रखने लगे, अगर पैसा अधिकांश मनुष्य-जाति को पराधीन और मोहताज बनाने लगे, तो उसका अनुचित अधिकार कैसे माना जा सकता है ? पैसा भी ग़रीबों के होने से ही बढ़ता है। अगर ग़रीब और मोहताज लोग न हों तो सूद कहाँ से आकर इकट्ठा हो ? अगर बेघर के लोग न हों तो मकान-किराया कहाँ से आकर इकट्ठा हो ? अगर भूख से मजबूर ग़रीब मज़दूर लोग न मिलें तो कारख़ाने और कम्पनियाँ कैसे चलें, और व्यापार कैसे चले तथा इनका मुनाफ़ा कहाँ से आवे ? अगर ग़रीब और मेहनत करनेवाले लोग न हों तो मोटर, रेल, जहाज़ आदि कैसे बनें और कैसे चलें ? लाखों करोड़ों के मुनाफ़े तो ग़रीब मज़दूर-दुनिया की बदौलत ही जमा होते हैं। अगर किसान न हों तो ज़मींदार मालदार कैसे बनें ? पैसा तो परिश्रम करनेवाले किसानों और मज़दूरों की बदौलत इकट्ठा हुआ है, फिर भी उन्हें कष्ट और पराधीनता में डाले हुए है। पैसा जनता में से ही इकट्ठा हुआ है। जनता में से पैसा इकट्ठा करने-

वालों ने केवल अपनी कुशलता से ही काम नहीं लिया है परन्तु कभी छल, कभी बल, कभी राज्य की सहायता, कभी क़ानून का ज़ोर, कभी केवल इत्तफ़ाक़ (युद्ध आदि) से धन जमा हुआ है। इसलिए इन्साफ़ की निगाह से पैसे का अधिकार माना ही नहीं जा सकता। जो चीज़ दुनिया को भूखा-नंगा-बेघर और अशिक्षित बनाए रक्खे उसकी सत्ता तो हटानी ही पड़ेगी। इसीलिए दुनिया के सब उत्पत्ति-साधनों पर राष्ट्रीय पंचायती अधिकार रहना चाहिए। पहले दुनिया अज्ञानी और भोली-भाली थी, पूँजीवाद की बढ़ती को समझ न सकी। ग़रीब लोग पूँजीपति-दल की हज़ारों वर्षों की धीरे धीरे चूसनेवाली धन-संग्रह की चालाकी को समझ न सके। अब भी पूँजीपति लोग और उनका पक्षपात करनेवाली सरकारें ग़रीबों, किसानों और मज़दूरों की जागृति को पसन्द नहीं करतीं, बल्कि उन्हें अज्ञान में दबा हुआ ही रखना चाहती हैं।

महनत करनेवालों की दुर्दशा

पूँजीपतियों ने मेहनत करनेवाली किसान और मज़दूर जनता को बिलकुल अपना मोहताज बना लिया है, और उससे मेहनत कराके खुद मौज़ से गुलछर्रे उड़ाते हैं। श्रमियों का बच्चा पैदा होते ही पेट भरने की फ़िक्र में लग जाता है। पूँजीवाद ने श्रमियों को मजबूरन गँवार और अशिक्षित रखा है। आज इन्साफ़ भी ग़रीबों को नहीं मिलता, उसे भी पूँजीपतियों ने ख़रीद लिया है। डाक्टर और वकील-बैरिस्टर श्रमियों की पूछ नहीं करते। चित्त को आनन्द देनेवाली कलाएँ, चित्र-कला, संगीत-कला, साहित्य-कला और साइन्स पूँजीपतियों के ही काम आती हैं। दुनिया को रोटी देनेवाले श्रमी रोटी को मोहताज हो गए हैं। दुनिया को कपड़ा देने वाले श्रमी नंगे रह गए हैं। दुनिया के मकान खड़े करनेवालों को टूटा छप्पर भी नहीं है। काम करने वालों को लम्बे घण्टों तक काम करना पड़ता है, उन्हें फ़ुरसत या विश्राम नहीं मिलता। और दिन रात परिश्रम करनेवालों के सिर पर भी कल की रोटी कैसे मिलेगी

यह फ़िक्र सवार रहती है। उनका सारा जीवन क़र्ज़ और चिन्ता में ही बीतता है। किसान और मज़दूर कोल्हू के बैल की तरह हो गए हैं। सिर्फ़ दूसरों को कमाकर देते जाना और खुद दुःख उठाते रहना ही उनके हिस्से में आया है। ग़रीबों की कठिन कमाई को पूँजीपति लोग अपने ऐश-आराम, ज़ेवर-पोशाक, नाच-गाने, मोटर-बग्घी कुरसी-टेबल, झाड़-फ़ानूस, बँगले-महल, मुक़दमेबाज़ी, रिश्वत, दावत और सैर-सपाटे तथा दूसरी फुजूलख़र्चियों में बरबाद करते हैं। आज-कल पूँजीपति मालिक उदारता के नाम पर मज़दूरों के लिए वेलफ़ेयर कार्य भी करते हैं, मज़दूरों के लिए मकान, अस्पताल, स्कूल, होटल आदि खोलते हैं, पर इसमें भी उनकी चाल ही रहती है। वेलफ़ेयर के कर्मचारी मज़दूरों के ऊपर खुफ़िया मुख़बिरों का काम करते हैं और मज़दूरों का संगठन नहीं होने देते। मज़दूर जनम भर मेहनत करके लाखों रुपया पूँजीपतियों को कमा कर देता है, परन्तु हाथ-पैर कट जाने, बीमार हो जाने, बूढ़े हो जाने पर उनको कोई खाने को नहीं देता। बेकारी की हालत में ग़रीबों को यह पूछनेवाला कोई नहीं है कि तुमने और तुम्हारे बच्चों ने कितने दिन से रोटी नहीं खाई। सरकार भी बेकारों की परवाह नहीं करती। किसान सदा क़र्ज़ में डूबा रहता है। सरकारी बजट में जब घाटा हो जाता है तब सरकार टैक्स बढ़ा देती है, पर किसान के घरू बजट में जो कमी रहती है उसको पूरा करनेवाला कौन है? कोई भी ग़रीब मेहनत करनेवालों का मददगार नहीं है। सब ग़रीबों को लूटने और ठगनेवाले ही हैं। इसीलिए सब ग़रीबों को खुद ही अपनी एकता करके अपना संगठन करना चाहिए।

कोरे धर्म और नीति के उपदेशों से काम नहीं चल सकता

ग़रीबों के कष्ट धर्म और नीति के कोरे उपदेशों से दूर नहीं हो सकते। "तुम सब पर दया करो, तुम अपनी आत्मा के समान सब की आत्मा को समझो, तुम्हारे पास एक रोटी हो तो आधी रोटी अपने पड़ौसी को दे दो, तुम अपने पैसे को ख़ैरात में ख़र्च करो, तुम अपनी दौलत खुदा की राह में लुटा दो, तुम अपरिग्रह-धर्म का पालन करो,"

इत्यादि उपदेश हज़ारों बरसों से चले आ रहे हैं परन्तु मालदारों ने कभी इनको नहीं माना। कई सद्भावना रखनेवाले महात्माओं ने चाहा कि जमींदार आदि वर्ग स्वेच्छा से सम्पत्ति को जनता की समझ कर जनता के हित में उपयोग करने लगे, पर इतिहास बताता है कि ऐसी सद्भावनाएँ पूँजीपतियों ने सफल नहीं कीं। मज़हबी पूँजीपति लोगों ने एक दूसरे को नीच, म्लेच्छ व काफ़िर कहा और धर्मयुद्ध या जहाद में एक-दूसरे के खून के प्यासे होकर खूँरेज़ियाँ कीं। मज़हबी मौलवी, पादरी और पण्डितों ने कुरान, बाइबिल, वेद और शास्त्र की किताबों पर सवाल उठाना या पुराने रिवाजों में सुधार करना भी गुनाह बना दिया, जिसका बुरा नतीजा यह हुआ कि ग़रीब लोगों ने अपने दिमाग़ से सोचना बंद कर दिया और सब इनकी दिमाग़ी गुलामी में फँस गए। आज भी हिन्दुस्तान में मज़हब की आड़ लेकर खुदग़र्ज़ लोग विदेशी राज्य से मिल गए हैं। वे ऐसी बातें पेश नहीं करते कि हर शख्स को, चाहे वह किसी मज़हब का हो, रोटी, कपड़ा, घर व शिक्षा पूरी तरह मिलनी चाहिए, कर्ज़दारी हटनी चाहिए; हिन्दुस्तान से विदेशी फ़ौज, विदेशी व्यापार और विदेशी हुकूमत हटनी चाहिए। बल्कि वे कहते हैं कि हमारा अलग-अलग चुनाव होना चाहिए और हमें इतनी नौकरियाँ और इतनी सीटें मिलनी चाहिए। इनको ग़रीबों की फ़िक्र नहीं है। दान या खैरात से भी ग़रीबी का सवाल हल नहीं सकता। ग़रीबों को सूद, लगान, किराया, मुनाफ़ा आदि ज़रियों से ग़रीब बनाकर फिर उन्हें दान या खैरात देना मानों ज़ख्म लगा कर दवा करना है। पूँजीवाद की झूठी फ़िलासफ़ी ने यह भी सिखाया है कि ग़रीब-अमीर का फ़र्क़ तो खुदा या क़िस्मत का बनाया हुआ है। ये सब झूठे उसूल हैं। खुदा ने तो ज़मीन के उपर सब इन्सानों के लिए सारी दौलत पैदा कर दी। यह खुदगर्ज़ पूँजीपतियों का अन्याय है कि वे कुदरती दौलत और ज़रूरी ज़रियों के मालिक बन बैठे और मेहनत करनेवालों को मोहताज बना दिया। इसलिए सारी समाज-व्यवस्था और राज्य-व्यवस्था में साम्यवादी क्रांति करके प्रत्येक व्यक्ति की बराबर

NATIONAL ARCHIVES LIBRARY
No. 427
Date 9.12.71
GOVT. OF INDIA

अामदनी करने की ज़रूरत प्रतीत होती है।

ज़माना साम्यवाद की तरफ़ जा रहा है

मनुष्य-जाति की अभी तक की प्रगति भी साम्यवाद की ही तरफ़ है। मनुष्य-जाति कई युगों में से गुज़री है। शिकार-युग, पशु-पालन-युग और कृषि-युग में से आदमी तरक्की करता हुआ चला आया है। हर-एक युग ने पिछले युग में क्रान्ति कर दी, उसको बिलकुल बदल दिया। इसी प्रकार मशीन-युग और औद्योगिक-युग ने भी पुरानी सारी समाज-व्यवस्था बदल दी। छोटे-छोटे खेतों की जगह मशीनों से मीलों के खेत बन गए जहाँ सैकड़ों आदमी इकट्ठे काम करते हैं। घरू कारीगरों की जगह ऐसे ऐसे कारख़ाने क़ायम हो गए हैं जहाँ हज़ारों कारीगर एक साथ काम करते हैं। छोटी-छोटी दूकानों की जगह बड़ी-बड़ी संसार-व्यापी कम्पनियाँ क़ायम हो गईं। छोटे-छोटे साहूकारों की जगह बड़े-बड़े राष्ट्रीय व अन्तर-राष्ट्रीय बैंक कायम हो गए, जिससे सारा व्यापार और धन थोड़े से ही व्यक्तियों के हाथों में आ चुका है। यह सब उन्नति पूँजीवाद ने स्वयं की है। यह सब क्रान्ति पूँजीपतियों ने अपने स्वार्थ और लाभ के लिए की पर इसका नतीजा यह हुआ कि खेती, उद्योग-धन्धे व्यापार बैंकिंग यह सब बड़े पैमाने पर सम्मिलित होने लगे। साम्यवाद भी इन सब कार्यों को बड़े पैमाने पर सम्मिलित करेगा। परन्तु चूँकि अलग-अलग पूँजीपति व्यक्ति अपना ही स्वार्थ-साधन करते हैं और जनता की दरिद्रता और दुर्दशा बढ़ाने के कारण बने हुए हैं, इसलिए आवश्यक है कि सब ज़रिए सर्व-पञ्चायती राष्ट्रीय या सामाजिक क़ब्ज़े में ले लिए जाएँ, और सम्मिलित रूप से सबको सुखी बनाने के उद्देश्य से चलाए जाएँ। सोविएट रूस में श्रमिकों का पञ्चायती राज्य क़ायम भी हो चुका है। इसका हाल हर मज़दूर और किसान को ज़रूर जान लेना चाहिए। दूसरे देशों में भी खेती उद्योग-धंधों व्यापार बैंकों आदि पर राष्ट्रीय नियन्त्रण होने लगा है। इससे ज़ाहिर होता है कि ज़माना साम्यवाद की तरफ़ जा रहा है। हिन्दुस्तान में भी साम्यवादी ढंग की प्रजातन्त्री व्यवस्था ज़रूर क़ायम हो सकती है।

अहिंसात्मक उपाय

तो क्या इसके लिए खून ख़राबी, रक्तपात की लड़ाई करनी होगी? नहीं, सब मिलकर यत्न करें तो अहिंसा के ज़रिए भी पूँजीपातियों की गुलामी से छुटकारा पाना संभव है। अहिंसा की परिभाषा को भी परिष्कृत करने का प्रयत्न कई विचारकों ने किया है।

संसार फिर स्वर्ग बन जायगा

ऐ दुःख उठाने वाले गरीबो! चेतो जागो और उठो! ऐ दूसरों को कमा-कमा कर देनेवाले किसानो और मज़दूरो, सम्हलो, अज्ञान से निकलो और अपने हक़ों को पहचानो। पूँजीवाद का मुक़ाबला करने के लिए एक हो जाओ, अपने आपस के भेद-भावों को भूल जाओ, और सब परिश्रम करनेवालों को अपने बराबर का भाई-बहन समझो। सारी मनुष्य-जाति के कल्याण के लिए हर तरह के कष्ट-सहन और स्वार्थ-त्याग के लिए तयार हो जाओ। देखो, नया युग और नया प्रभात तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। जिस दिन तुम सब मिलकर अपनी खोई रोटी माँगने लगोगे, उसी दिन तुम्हारा अपहरण करनेवाला पूँजीवाद थर्रा उठेगा। जिस दिन तुम संगठित हो जाओगे उस दिन पूँजीपतियों का आसन हिल जायगा। जिस दिन तुम सब मिलकर बरसों के चले आनेवाले अन्याय को मिटा डालने की कोशिश शुरू करोगे, उसी दिन पूँजीवाद का क़िला जड़ से उखड़ जायगा। आशा रक्खो, श्रद्धा रक्खो, हिम्मत रक्खो। तुम्हारे प्रयत्न अवश्य सफल होंगे और संसार फिर स्वर्ग बन जायगा। उसी अवस्था में जीवन-सामग्री, सम्पत्ति, विद्या, कला और विज्ञान सभी मनुष्यों के जीवन को सुखमय करनेवाले होंगे।

मज़दूर-किसान पुस्तक-माला

किसानों और मज़दूरों दोनों के बीच में काम करते हुए हमें अनुभव हुआ कि सरल भाषा में साम्यवाद और राजनीति सम्बन्धी साहित्य, जो मज़दूरों और किसानों को उपयोगी हो सके, प्रकाशित होने की बड़ी जरूरत है। इस जरूरत को पूरा करने के लिए "हम भूखे नंगे क्यों हैं" यह ट्रैक्ट एक पहली कोशिश के रूप में तैयार हो गया है। इसके आगे हम निम्नलिखित ट्रैक्ट निकालने का विचार करते हैं:—

१– सच्चे चोर डाकू कौन हैं?
२– ज़मीन किसकी है?
३– मज़दूरों और किसानों का राज्य
४– राज्य करना सीखो

इत्यादि

इस प्रकाशन में तभी सफलता मिल सकती है जब हमारे साहित्य के काफ़ी स्थायी ग्राहक बन जाँय। उन्हें हमारा साहित्य [illegible]ने मूल्य में मिलेगा। प्रवेश फ़ीस चार आना भेजने से कोई भी व्यक्ति स्थायी ग्राहक बन सकेगा। स्थायी ग्राहक को प्रकाशित ट्रैक्ट की एक एक प्रति तो लेनी ही पड़ेगी। अगर प्रत्येक ग्राहक कम से कम एक एक रुपए के सब प्रकार के ट्रैक्ट प्रचारार्थ बेच दे या वितीर्ण करदे तब तो हमें काफ़ी सहायता हो सकती है।

इस कार्य में हम इस विषय की रुचि रखनेवाले लेखक महानुभावों से अनुरोध करते हैं कि वह मज़दूरों और किसानों के उपयोगी ट्रैक्ट तैयार करके भेजें। इस प्रकार आए हुए लेखों में से सब के मौलिक विचारों का समावेश करके ट्रैक्ट तैयार करके प्रकाशित किया जायगा।

आर्थिक सहायता कर सकनेवाले महानुभावों से भी प्रार्थना है कि वह अपनी उदारता से इस मज़दूर-किसान पुस्तक-माला को सहायता दें। हम इस माला को लेखकों, धन-दाताओं और ग्राहकों के सहयोग से चलनेवाली एक सहयोगवादी संस्था बनाना चाहते हैं। वर्तमान व्यवस्थापक अपने लिए कोई विशेषाधिकार रखना नहीं चाहते।

निवेदक
व्यवस्थापक
मज़दूर-किसान पुस्तक-माला कार्यालय
ग्वाल टोली, कानपुर

पुस्तक-प्राप्ति के स्थान

(१) मैनेजर 'मज़दूर' ग्वालटोली, कानपुर
(२) मैनेजर सस्ता साहित्य मंडल दिल्ली
(३) मैनेजर आदर्श प्रेस केसरगंज अजमेर
(४) मैनेजर 'विशाल-भारत' पुस्तकालय, क...
(५) श्री. गिरधरलाल ... स्नेहलतागंज...
(६) मैनेजर सरस्वती प्र... क...

मजदूरो किसानो और ग़रीबो

सब मिलकर एक हो जाओ

अगर तुम दरिद्रता और भूख से बचना चाहते हो तो अपने अपने पेशे का संघ बनाओ। यह संगठन का ज़माना है। कहीं भी रहो, और कोई भी पेशा करो, हमेशा संघ में शामिल रहो। अपने संघ का चन्दा दो, अपने संघ की मीटिंग मे हमेशा जाओ, अपने स्वार्थ और भेदभावों को छोड़कर संघ और संगठन की उन्नति में तन मन से मदद करो। और, साम्यवादी [सोश्यालिस्ट] साहित्य पढ़कर अपनी लियाक़त बढ़ाओ।

विज्ञापन

मज़दूरोपयोगी व साम्यवादी अख़बार पढ़ना हो तो ग्वालटोली कानपुर से साप्ताहिक ' मज़दूर ' मंगाइये।

सहकारी मुद्रणालय, इंदूर.